ऊल जलूल

– सुकुमार राय

.....

सुकुमार राय बंगला के बहुत प्रसिद्ध लेखक हुए हैं, जिन्होंने बच्चों के लिये बहुत कुछ लिखा। वे ऊटपटांग बातों से हंसाने में माहिर हैं। यहां उनकी किताब हॉजोबॉरोलॉ का एक मजेदार अंश दिया जा रहा है। इसके पूरे हिन्दी अनुवाद को 'एकलव्य' ने अपनी पुस्तक ऊलजलूल में छापा है। यहां दिये गये चित्र स्वयं सुकुमार राय ने बनाए हैं। अपनी पुस्तकों में वे ऐसा अक्सर किया करते थे।

.....

"मैं सोचने लगा, चलो अब राह तलाशकर घर लौटा जाए। इतने में पास की झाड़ी से ज़ोर-ज़ोर से हँसने की आवाज आई। हँसी ऐसी कि सम्भाले न सम्भलती हो। झाँककर देखा तो पाया कि एक जन्तु जो इन्सान है या बन्दर, उल्लू है या भूत, ठीक तय नहीं किया जा सकता, हाथ-पैर पटकता हँसे जा रहा था और कहता जा रहा था, "ये गया रे, अन्तड़ी-फन्तड़ी सब फट गया रे।"

अचानक मुझे देख दम साधा और उठते हुए बोला, "अच्छा हुआ तुम आ गए, नहीं तो हँसते-हँसते पेट फट ही जाता।"

मैंने पूछा, "तुम इतने भयानक तरीके से क्यों हँस रहे थे?"

"क्यों हँस रहा हूँ सुनोगे? मान लो पृथ्वी चपटी होती और पूरा पानी बहते-बहते किनारे पर आ जाता और किनारे की मिट्टी घुलकर चिपचिपे कीचड़ में बदल जाती और सारे लोग उसमें फिसलकर धपाधप गिरते तो हो, हो:, हो:, हो... " इतना कह वह फिर से हँसी के मारे लोटपोट होने लगा।

मैंने कहा, "अजीब है! इस बात पर इत्ता हँस रहे हो?"

उसने हँसी रोकर कहा, "ना, ना, सिर्फ इस बात पर नहीं। ज़रा सोचो कि एक आदमी आ रहा है, उसके एक हाथ में मलाई बरफ और दूसरे हाथ में मुलतानी मिट्टी है और वह कुल्फी खाने की बजाय गलती से मुलतानी मिट्टी खा लेता है-हो, हो हो, हा:, हा:,हा...।" उसे फिर से हँसी का दौरा पड़ा।

मैंने कहा, "क्यों तुम यह सब असम्भव बातें सोचकर ख्वामख्वाह हँसकर बेहाल हो रहे हो?"

वह बोला, "ऐसा नहीं है, सब कुछ क्या असम्भव होता है? सोचो ज़रा, एक आदमी छिपकलियाँ पालता है। उन्हें प्रतिदिन नहला धुलाकर सुखाने रखता है। फिर किसी एक दिन न जाने कहाँ से एक दढ़ियल बकरा आता है और सारी की सारी छिपकलियाँ चट कर जाता है - हो:, हो:, हो, हो....."

उस जन्तु के हाव-भाव मुझे बड़े अजीबोगरीब लगे। मैं पूछ बैठा, "तुम कौन हो भई? नाम क्या है तुम्हारा?"

कुछ पल सोच उसने जवाब दिया, "मेरा नाम है हिजि बिज् बिज्। मेरा नाम है हिजि बिज् बिज्, मेरे भाई का नाम है हिजि बिज् बिज्, मेरे बाप का नाम है हिजि बिज् बिज्, मेरे फूफा का नाम है हिजि बिज् बिज्...।"

मैंने टोका, "फिर इतना बखान करने के बदले यही कहो कि तुम्हारे पूरे कुनबे में सबका ही नाम हिजि बिज् बिज् है।"

इस पर कुछ देर सोच उसने कहा, "ऐसा तो नहीं है, मेरा नाम है तुकाई। मेरे मामा का नाम है तुकाई, मेरे चाचा का नाम है तुकाई, मेरे मौसा का नाम है तुकाई और मेरे ससुर का नाम है तुकाई...।"

मैंने कुछ धमकाकर पूछा, "सच बोल रहे हो? या सब मनगढ़न्त है?"

जन्तु कुछ सकपकाया, "ना ना, मेरे ससुर का नाम है बिस्कुट।"

अब मुझे गुस्सा चढ़ आया। मैंने चिढ़कर कहा, "तुम्हारी एक भी बात पर यकीन नहीं है मुझे।"

इधर न बात न चीत। झाड़ी की आड़ से एक बड़े भारी दढ़ियल बकरे ने झाँकते हुए पूछा, "शायद मेरी बात हो रही थी, है ना?"

मैं कहने ही जा रहा था 'न' कि बकरे ने तड़ातड़ बोलना जारी रखते हुए कहा, "तुम लोग चाहे जितनी बहसबाज़ी क्यों न करो, ऐसी तमाम चीज़ें हैं जिन्हें बकरे नहीं खाते। इसलिए मैं इस विषय पर एक भाषण देना चाहता हूँ। मेरे भाषण का विषय है 'बकरे क्या नहीं खाते'।"

इतना कह वह हठात् दो कदम आगे बढ़ा और अपना भाषण प्रारम्भ कर दिया :

"हे बालवृन्द व प्यारे हिजि बिज् बिज्। मेरे गले में लटके सार्टिफिकेट को देखते ही तुम लोग समझ लोगे कि मेरा नाम श्री बैंकरण सिंह, बी.ए. खाद्य विशारद है। मैं अद्‌भुत तरीके से बैं-बैं कर सकता हूँ, सो नाम बैंकरण, या कहो व्याकरण है। और सींग मेरे तुम्हें नज़र आ ही रहे होंगे। अँग्रेजी लिखते समय लिखता हूँ बी.ए. अर्थात बैं। कौन-कौन सी वस्तुएँ खाई जा सकती हैं और कौन-कौन-सी नहीं, यह सब मैंने खुद जाँच पर खकर देखा है। इसीलिए मेरी उपाधि है खाद्य विशारद। तुम्हारी बंगाली भाषा की एक कहावत है 'पागोल की ना बॉले, छागोल की ना खाए।' (पागल क्या नहीं कहता और बकरा क्या नहीं खाता)। यह कहावत निहायत अन्यायपूर्ण है। अभी कुछ देर पहले ही यह अभागा कह रहा था कि बकरे छिपकली खाते हैं। यह बात पूरी तरह झूठी है। मैंने कई प्रकार की छिपकलियाँ अच्छी तरह चाट-चाटकर देखी हैं। उनमें खाने लायक कुछ भी नहीं है। हाँ, यह ज़रूर सच है कि हम ऐसी कई चीज़ें खाते हैं जो तुम नहीं खाते। जैसे -कागज के लिफाफे, नारियल की जटा-जूट अथवा अखबारी कागज़ या फिर सन्देश जैसी अच्छी-अच्छी मासिक बाल पत्रिकाएँ। पर कोई मजबूत जिल्द बन्धी किताब हम कभी भी नहीं खाते। हम कभी-कभार एक-आध रज़ाई-कम्बल या गिलाफ-तकिया भी खाते हैं। पर जो यह कहते हैं कि हम पलंग या मेज़-कुर्सी खाते हैं, वे भयानक झूठे हैं। हाँ, जब मन में मौज की तरंग उठती है तो हम कई तरह की चीज़ें चखकर देखते हैं - जैसे पेंसिल, रबर या बोतलों के ढक्कन या कोई सूखा पुराना जूता, या कैनवस का बैग। सुना है मेरे दादाजी ने एक बार मौज ही

मौज में एक गोरे साहब का लगभग आधा तम्बू खा डाला था। पर इसका मतलब यह तो नहीं है कि हम छुरी-कैंची, शीशी-बोतल भी खाते हैं। यह सब हम कभी नही खाते। हममें से कोई साबुन खाना पसंद करता है, पर असल में वे निहायत छोटे-मोटे रद्दी साबुन होते हैं। मेरे ही छोटे भाई ने एक बार एक पूरी की पूरी साबुन की बट्टी खा डाली थी..." कहते ही बैंकरण सिंह आकाश की ओर आँखें उठा बैं बैं दहाड़ें मार रोने लगा। मैं फौरन समझ गया कि साबुन खा उसके भाई की अकाल मृत्यु हो गई होगी।

हिजि बिज् बिज् इस दौरान पड़ा-पड़ा सो रहा था। अचानक बकरे की विकट रुलाई सुन वह हड़बड़ाकर उठा और ठसका खाकर बेहाल हो गया। मैंने सोचा, लो यह तो घबराहट से मर ही जाएगा। पर कुछ ही देर में दे खता हूँ कि वह फिर से हाथ-पैर पटक हँस रहा है।

मैंने कहा, "लो, अब हँसने की क्या बात हो गई?"

उसका जवाब था, "अरे भई एक आदमी था जो सोते समय भयानक खर्राटे मारा करता था। इसलिए उससे सब नाराज़ रहते थे। एक दिन उनके घर पर ज़ोरदार बिजली कड़की। फिर क्या था, सभी घरवाले उसे ही पकड़कर मारने-कूटने लगे -हो:, हो:, हो, हो..."

मैंने चिढ़कर कहा, "सब बकवास है।" यह कह मैं जैसे ही पलटने लगा कि देखता क्या हूँ एक गंजा न जाने किस नौटंकी के कलाकार-सा अचकन-पजामा पहने, मुस्कुराता-मुस्कुरता मुझे देख रहा है। देखते ही मेरे तन बदन में मानो आग लग गई।

मुझे पलटता देख उसने बड़े लाड़ से कन्धे झुका, दोनों हाथ हिलाते हुए कहा, "ना भई ना, इस समय मुझे गाने को मत कहना। सच कह रहा हूँ, आज मेरा गला अच्छी तरह खुलेगा ही नहीं।"

मैंने झिड़ककर कहा, "क्या आफत है! गाने को कहा किसने?"

पर वह आदमी तो निहायत बेशर्म निकला। वह फिर भी मेरे कान के पास घुनघुनाकर कहने लगा, "नाराज़ हो गए? हाँ भई, गुस्सा गए? अच्छा तो फिर कुछेक गीत सुना देता हूँ, नाराज़ होने की क्या ज़रूरत है?"

मैं कुछ कहूँ इसके पहले ही बकरा और हिजि बिज् बिज् एक स्वर में चिल्ला उठे, "हाँ-हाँ, गीत तो हो ही जाए।" तुरन्त गंजे ने जेब से गीतों के दो बड़े पन्ने निकाले और उन्हें आँखों के पास ला, गुनगुन करते-करते अचानक पतले सुर में चीत्कार कर गाने लगा -"लाल गीत में नीला सुर, हँसी-खुशी की गंध।" बस यही एक पद उसने एक बार, दो बार, पाँच बार, दस बार गाया।

मैं उकताकर बोला, "अच्छी मुसीबत है, क्या गीत का कोई दूसरा पद है ही नहीं?"

गंजे ने कहा, "ज़रूर है, पर वह एक दूसरा ही गीत है, वह है - अली-गली-चला राम, फुटपाथ पर धूमधाम, स्याही से चूने का काम। पर यह गाना मैं आजकल नहीं गाता। एक और गाना है -नैनीताल का नया आलू। यह

बहुत नरम आवाज़ में गाना पड़ता है। आजकल यह भी नहीं गा पाता हूँ। आजकल जो गाता हूँ वह है मोर पंख का गीत।" इतना कह उसने गाना शुरू किया –

"काले रंग का मोर पंख है, आकाश के कान-कान में,

शीशी बोतल छिप्पी ढक्कन पतले-पतले गान-गान में,

आला-भोला बाँका उजाला आधा-आधा कितनी दूर

पतला-मोटा सादा-काला छलछलाता छाया सुर।"

मैंने कहा, "यह भी कोई गीत है? इसका तो कोई सिर-पैर ही नहीं है। कोई मतलब ही नहीं है।"

हिजि बिज् बिज् बोला, "हाँ, गाना बड़ा सख्त है।"

बकरा बोला, "कहाँ सख्त है? हाँ, बस वह शीशी बोतल वाली जगह ज़रा-सी सखत है। उसके अलावा मुझे तो सख्त नहीं लगा।"

गंजे ने बड़े अभिमान से कहा, "तो तुम लोग सरल गीत सुनना चाहते हो, तो यह बात कह देनी थी। इतनी बातें सुनाने की क्या जरूरत। मुझे क्या सरल गाने नहीं आते?" कह उसने यह गीत शुरू किया –

"चमगादड़ बोला ओ भाई साजारू

आज रात देखना बड़ा ही मजारू।"

मैंने आपत्ति की, "मजारू तो कोई चीज़ होती ही नहीं।"

गंजे ने कहा, "कैसे नहीं? ज़रूर होती है। अगर कंगारू, देवदारू, बाज़ारू आदि हो सकते हैं तो फिर भला मजारू क्यों नहीं हो सकता?"

बकरा बोला, "फिरहाल गाना तो चलने दो। मजारू होता है या नहीं, यह बात बाद में देखी जाएगी।"

गीत फिर शुरू हुआ – "चमगादड़ बोला, ओ भाई सजारू

आज रात देखना बड़ा ही मजारू।

होंगे इकट्ठे चमगादड़ और उल्लू,

आएँगे, मरेंगे चूहे भर चुल्लू।

थर-थर काँपेंगे मेंढक और मेंढकी

छूटेंगे पसीने फूटेगी घमौरी की ढेंढकी।

दौड़ेगी छछुन्दरी भिंचेंगे दाँत डर से,

देखेगें तमाशा चेले-चपाटे इधर से।"

मैं फिर टोकने जा रहा था कि सम्भल गया। गीत बढ़ रहा था -

"साजारू बोला, झाड़ी में अभी-अभी

सोई मेरी बीवी तुमने देखा नहीं?

चेता देना उल्लू, उल्ली को सही-सही,

सुन उसकी चीखें नींद उसकी टूटे न कहीं।

नहीं तो मारूँगा उनको मजा के,

बतलाना यह बात उन्हें समझा के।

चमगादड़ बोला, उल्लू के सारे कुटुम्बी,

झेलेंगे क्यों भला तुम्हारी यह धमकी?

घुप्प अंधेरे में सोता है भला कौन,

पत्नी है तेरी थुलथुल अकल के पौन।

तुम भी हो दादा अव्वल दर्जे के पागल,

चिमनी से काले, खपटे से धाँधल।"

.....